ISSN No-2231-5063 Vol.1,Issue.XI/May 2012pp.1-4

Research Paper

वेदों में संगीत

पण्डया विजय कुमार प्रकाशचन्द्र
मुलाकाती अध्यापक (संस्कृत विभाग)
आदिवासी कला एवं वाणिज्य कॉलेज भिलोडा,
भिलोडा

प्रस्तावना :

हमारें जीवन की शुरूआत रूदन और उसके जैस भाव वाले आवाजो के साथ होती है। इसलिये हम शब्द को समझने से पहले उसके भावार्थ को पहले समझ लेते है। समस्त मानव जीवन का इतिहास यहि साबित करता है कि पृथ्वी की उत्पति के बाद 'भाषा' से पहले 'स्वरों' कि उत्पति हुई थी। भारतीय संगीत का इतिहास जानना हो तो हमें वेदों में जांखना होगा भारत में आर्यो के आगमन के बाद वैदिक साहित्य की रचना हुई होगी वो हम जानते है उसके बाद रामायण–महाभारत और पौराणिक कथाओं का विकास हूआ।

शुरूआत में आदिमानव कुदरती वातारण में संगीत को जाने बीना ही स्वरों का उच्चार किया बाद में बोद्धिक विकास होने लगा तो मानव किन्ही एक जगा पे स्थिर होने लगा वो समूह बनाकर रहने लगा वो खेती करने लगा, उसको लगा कि जो सुर्य और वरूण कि कृपा न होतो सब मेहनत विफल जायेगी और धान्य कि प्राप्ति नहीं होगी वैसी आर्यो कि सोच थी। इसलिए इन्द्र, वरूण, अग्नि, सोम, पृथ्वी इत्यादि तत्वों की उपासना के लिए क्रियाए की रचना हुई, और छंदों में उसका गान हुआ वो हि हमारी संगीत की समज की शुरूआत थी।

ऋग्वेद के समय तक आर्य जाति वसवाट कि दृष्टि से स्थिर हो गयी थी वो खेती और पशुपालन करने लगे थे। वो सामाजिक जीवन जीने लगे थे वों संगठन में रहने लगे थे। सुबह–शाम हर एक परिवार ईश्वर की उपासना मंत्रों और संगीतो से करने लगे थे और संगीत को वो लोग सुख, शान्ति, समृद्धि और उत्कर्ष का प्रमुख कारण मानते थे।

वेदकाल से ही संगीत दो प्रपाटों में पाया जाता था जो मंत्रों द्वारा सुव्यवस्थित और समान थी। जिसमें से शिष्ट संगीत का विकास हुआ वों संगीत पूरे भारत में एक ही रीत से गाया जाता है और दूसरा पूर्वह भवों संगीत है जो भारत के भिन्न–भिन्न प्रदेशों में उनकी भाषा जीवनशैली से प्रेरित हो ों अभिव्यक्त होता है।

ऋग्वेद में तीन प्रकार के स्वरों का उपयोग किया गया है। 1. उदान्त (उच्चाह उदात) 2. अनुदान्त (निचौर अनुदातः) 3. स्वरित (समाहाराः स्वरितः)

1. उदान्तः उच्चोह उदान जो स्वर ऊंचा होता है उसे उदान्त कहते है।
2.अनुदान्तः निचौह अनुदान्त जो स्वर नीचा उसे अनुदान्त कहते है।
3. स्वरितः समाहारा स्वारत जो स्वर बीच वाला होता है उसे स्वरित स्वर कहते है।

याज्ञवल्कय मूनी ने स्वरों का रंग, स्वर का देव, स्वर की जाति, स्वर का अधिष्दाता मूनी स्वर का छंद बाबत में निचे लक्षणों के बारे में बताया हैः–

स्वर रंगः

शुक्लमुच्चं विजानीयात्	उच्च=ऊदात्त=शुकल
नीचं लोहितमुच्यते	नीचे=अनुदान्त=लोहित
श्यामं तु स्वरितं विद्यात्	स्वरित=श्याम

स्वर देवः

अगिन्मुच्चस्य देवतम्	उच्च=उदान्त=अग्नि
नीचैस्सामें विजनीयत्	नीचे=अनुदान्त=सोम
स्वरिते सविता भवेत्	स्वरित=सविता

स्वर जातिः

उदान्तं ब्राम्हणं विद्यात्	उदान्त=ब्राम्हण
नीचं क्षत्रियमुच्यते	अनुदान्त=क्षत्रिय
वैश्यं तु स्वरितं विद्यात्	स्वरित=वैश्य

स्वर अधिष्ठता मूनीः

विद्यार्दुदान्तं गायत्रीं	उदान्त=भारद्वाज
नींच गौतममित्याहुः	अनुदान्त=गौतम
गार्ग्य च स्वरितं विदुः	स्वरित=गार्ग्य

स्वरना छंदः

भारद्वाजमुदान्तकम्	उदान्त=गायत्री
नीचं त्र्यैष्टुभमुच्यते	अनुदान्त=त्रैष्टुभ
जागतं स्वरितं विद्यात्	स्वरित=जागतम्

वेदकाल में एक, दो, तीन, चार, पांच, छः और सात स्वर गान क्रियाओं का उल्लेख देखने को मिलता है और उसके अनुक्रम में आर्चिक, गायिक, सामिक, स्वरान्तर, खोडव, षाडव और सम्पूर्ण तरीके से नाम दिये है। ऐसे भरतनाटयशास्त्र ईत्यादिना समय से पहले सप्तफना सात स्वरों का उल्लेख है।

आर्चिक गानः

एक ही स्वर में गाने का, कैसे गाये शक और प्रश्न तो स्वाभाविक है, परन्तु वैदिक समय में ईश्वर–उपासना एक ही स्वर से कर सकना संभव था। और एक शब्द गाते ¬ शब्द संगीतमय वातावरण का सृजन करता। इस एक अक्सर में अ,ऊ,म् जैसे तीन वर्णो का समावेश है। ऐसे तीन शक्ति का अर्पण करता है। अ– उत्पति शक्ति है जो ब्रम्ह स्वरूप है, ऊ–धारण और पालन शक्ति है जो विष्णु स्वरूप है, म्– संहारक शक्ति है जो महेश स्वरूप है। ये तीन शक्ति समुदाय¬ ने त्रिमुर्ति परमेश्वर समान मानने में है।

¬ ये वेदों का बीजमंत्र है, भगवान मनु ने कहा है कि ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद मसे अ ऊ म् ये तीन अक्षरों को लेकर प्रणव इसलिये ¬ शब्द बना। प्रणव ये परमात्मा मधुर नादात्मक नाम मानते है।

¬ का एक स्वर में सातों स्वरों का समावेश है। ध्वनिविज्ञान सहायकनाद (च्तंजपंस छवजमे)कहते है कि तेवा नादों ¬ ना रटण थी ऊत्पन्न हुआ है। जो स्वयं भू स्वर है और ये जो स्वर है अपने शास्त्रीय संगीत के स्वरों में अलग–अलग ऊचाई की भूमिका का रूप देता है। मतलब इस स्वर उत्पन्न करने और समझने के लिए स्वस्थ चित्त साधना करनी अनीवार्य है परन्तु जो गायक ¬ साधना कर सकता है उसके लिये संगीत के स्वर, श्रुति, राग, ताल, लय, आदि अंग सरल बने रहते है। ¬ कार की ध्वनि कैसी होती है? इस बात की जानकारी योगशास्त्र में है कि ''प्रणव ध्वनि तेल की धार की ओर लम्बे घन्टे की श्रुतिमधुर है और उसका स्वर जो धारण कर सकता है उसे सम्यक अवस्था में प्रकृति स्थिर बन कर साधना कर सकती है।''

गायिक गानः

दो स्वरों का उपयोग करके जो गान कराता है उसे गायिकगान कहते है। ईश्वर नाम स्मरण में इस तरीके स्वर का उपयोग होता है जैसे किः

नि	सा
राम	राम

सामिक गानः

तीन स्वरों का उपयोग करके जो गान गाया जाता है उसे सामिक गान कहते है। सामगान शुरूवात में तीन स्वरों से गाया जाता है। इन तीनों स्वरों के नाम कृष्ट म, प्रथम ग और चतुर्थ नि. (नारदीय शिक्षा, 1–24)

इसके उपरान्त तीनों स्वरों की लयबद्ध धुन की निर्माण हो सकता है।

घ	नि	सा
जय	जय	जय
ग	रे	सा
गो	वि	दम्

स्वरान्तरः

चार स्वरों का उपयोग साथ में मंत्रों और छंदगान को स्वरान्तर कहते है।

तदुपरान्त लयबद्ध आरतीयों परन्तु चार स्वरथी गाये जाते है। जैसे

नि	सा	रे	म
सा	बस	दा	शिव
म	रे	सा	सा
सा	ब	हर	हर

इस तरीके से पांच स्वर के ओडकगान, छः स्वर से षाडवगान और सात स्वर से संपूर्णगान कहलाया। चार स्वरों के उपयोग से रागस्वरूपी कल्पना आयी है। ये ऊपर से जानने में आता है कि प्राचीन काल में जातिगायन में कि वर्तमान राग–गायन मूल में से ये विकासक्रम रहा है।

सामगानः

सात स्वर में जो सामगान होता था उसके नाम निचे प्रमाण के रूप में दिये है।

कृष्टः म, प्रथमः ग, द्वितीयः रे, तृतीयः सा, चतुर्थः नि, भन्द्रः घ, अतिस्वार्यः 5 (नक्शो नं.1)

इस स्वरों का नाम आज के स्वरों के नाम से अलग है और उसका क्रम अवरोह है। सामवेद में कामण, तीव्र आदि स्वर का भेद उनकी ताल बाबत उल्लेख नहीं है। अलबत, तीन प्रकार के लय– विलबित, मध्य और द्रुत– उपरान्त गुरू, लघु और प्लुत ईत्यादि मात्राओं का उल्लेख देखने में आया है।

वैदिक समय में संगीत का शिक्षण और यज्ञयाग इत्यादि संचालन ब्राम्हणों के हाथ में था। जिसका स्वरूप आध्यामिक था। जो उस समय समाज में मनोरंजन प्रकार के संगीत का गान करते थे। ऋग्वेद में बताया गया है कि जनसमाज के उत्सवों में और त्योहारों में मेलों में उजवता था, जिसका नाम 'समन' दिया था। इस मेले में स्त्री और पुरूष निःसकाय प्रसन्नता से गीत की और नृत्य का अश्व और रथ चालने की हर फरमाईश भाग लेता था। वैदिक समय बाद संगीत नाटकों करता व्यवसाय में अस्तित्व में आये। जिसको गांधर्व कहा गया।

वैदिक काल में प्रणता ऋषि मुनियों ने मंत्रों की रचना की इतना ही बस नहीं। उनका पुरूषार्थ स्वर बाबत खुबउडाणभर्यो था। उदान्त, अनुदान्त और स्वरित स्वर रंगों है। कई जातियां है, जिसका अधिष्ठाता देव कोन है, उसके अनुकुल छंद बनाने के लिये बहुत विचार करते। जिसकी कल्पना करे तो यह विषय कर्णोन्द्रिय इसे विद्या को चक्षुइन्द्रिय की तरफ ले जाती है। आज संगीत दृष्टिता (visulisation of music) पर जो विचार हो रहे है उसके पायें में ये विचारसरणी उपयोगी बन पायी है।

संगीत वाध्यः

वैदिक समय में महती वीणा, पिनाकी वीणा, कात्यानी वीणा, रावणी वीणा, भक्त वीणा, कोकिला, शततंत्री वीणा, इत्यादि वीणा के अनेक प्रकार प्रचार में आये।

शतपथ ब्राम्हण में उत्त्रभन्द्रा मूर्च्दना का उल्लेख आया है, ''वीणा का तारने उत्तरभन्द्रा में मेणववो'' आज मुर्च्छना के अपन थाट के रूप में पहचानते है। उत्तरभन्द्रा, जो षड से शुरू होती मुर्च्छना होती तो ये शुद्ध स्वरो की मनाती (ये स्वर हाल के शुद्ध स्वरों से अलग है)। तब ब्राम्हण वीणावादक, संगीत वृन्दना, गायक इत्यादि के लिए शब्दों का प्रयोजन करते थे।

आरयण्क ग्रंथों में दुंदुभि, भूमिदुंदुभि, वीणा, कर्करी, तुणव इत्यादि वाद्य यंत्रों का प्रयोग लग्न, यज्ञ आदि मंगल कार्यो में किया जाता था। ऐसा उल्लेख है। उपनिषद ग्रन्थ में षड, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद इन सात स्वरों के नाम, गीत, वाद्य और नृत्य का उल्लेखों जिसमें चारों प्रकार के वाद्यों का प्रचार हुआ था, जिसे बताया गया है। उपनिषदकाल में सामगान का प्रचार विशेष था। छंदोग्योपनिषद में पहला अध्याय में खण्ड 8 तक सामगान का वर्णन दिया हुआ है।

सू.काल में वाद्यों–खास कर वीणा–केम बनाने का उल्लेख है। शांखायन श्रोतसूत्र में शततंत्री वीणा लाटचायन श्रोतसूत्र में वीणा किस तरीके से बनी हुई थी का वर्णन है। ये सब मानों विशेषकर कर्मकाण्डों का होने से गायन–वादन वखते परन्तु उसकी विधियों का उल्लेख मिलता है।

संदर्भ सूचीः

भारतीय संगीत का विकास– श्री अमुभाई बी. दोशी
Aspects of Indian Music - Govt. of India Publication
वैदिक संगीत– विलु कुमार देसाई
संगीत शास्त्र– पं. डायालाल शिवराम